गुरुवाणी

एक संकल्प लें, एक इच्छाशक्ति को अपने अन्दर जगायें कि ''मैं अपने आपको एक मनुष्य, पूर्ण मनुष्य का रूप देना चाहता हूँ या मैं एक अच्छा चीज राष्ट्र को देना चाहता हूँ। आप एक अच्छा संकल्प लें, चरित्रवान बनें। **–पीठाधीश्वर बाबा सिद्धार्थ गौतम राम जी**

अघोरेश्वर निनाद

अघोरान्ना परो मंत्रो। नास्ति तत्वम् गुरोः परम्।।

R.N.I.UPHIN-2000/3008 Postal No. VSI-E-01/2013-2015

वर्ष-१४, अंक २३, वाराणसी। सोमवार १५ दिसम्बर २०१४ ई० सहयोग राशि ४.२५

भगवान के यहाँ चापलूसी नहीं चलती

क्रींकुण्ड स्थल, वाराणसी में अघोराचार्य बाबा कीनाराम अघोर शोध एवं सेवा संस्थान के कार्यालय में एक प्रमुख स्थान पर तख्ती पर उपरोक्त शीर्षक वचन लगा है जो अनायास ही श्रद्धालुगण, भक्तगण एवं आगन्तकों का ध्यान आकृष्ट करता है।

जैसा कि सर्वविदित है कि शब्द चापलूसी या चाटुकारिता के श्रवण मात्र से ही एक ओछापन, अभाव का भाव पैदा हो जाता है। जिस व्यक्ति को चाटुकार या चापलूस की संज्ञा दी जाती है उसे हास्यास्पद दृष्टिकोण से देखा जाता है उसके कृत्य समाज के लिये ग्रहणीय नहीं होते बल्कि त्याज्य होते है। यदि आजीवन किसी को यह बीमारी लगी रही तो उसके इह लीला समाप्ति के बाद भी लोक उसे आजीवन चाटुकार या चापलूसी, चमचागिरी करते रहने के लांछन से नवाजते है। यह तो मनुष्यों के प्रति भी व्यवहार में स्वीकार्य नहीं है। परन्तु पराकाष्ठा तो तब हो जाती है जब कुछेक व्यक्ति ईश्वर, गुरु या भगवान के प्रति भी ऐसा ही व्यवहार अपनाने लगते हैं। तात्पर्य यह है कि सच्ची भक्ति भावना के अभाव में यदि कुछ लोग कृत्रिमता से क्षणिक उपाय से उस परम फल की इच्छा करें जो वास्तविक सेवाभाव, श्रद्धाभाव के बिना सम्भव ही नहीं है तो उसे महज जीवन को अकारथ करना तथा बहुमूल्य समय की बर्बादी ही कही जा सकती है। यह उसी तरह है जैसे कोई किसी नक्षत्र का रहस्य बता रहा हो या कोई अपने अविष्कार का प्रदर्शन कर रहा हो तथा अधिसंख्यक बुद्धिजीवि वर्ग उसके सम्मान में उसके समक्ष नतमस्तक हो तभी भीड़ में से कुछेक व्यक्ति उसके आविष्कार, खोज की समझ न रखते हुए भी उन समझदार या जिज्ञासु व्यक्तियों की श्रेणी में अपनी पैठ बनाने को उद्यत हो जाय एवं उस वैज्ञानिक को ही पकड़कर बैठ जाय एवं नाना प्रकार के अपने भाव भंगिमाओं से उसे व्यक्तिगत रूप से रिझाने का प्रयास करने लगे तो वह इंसान या वैज्ञानिक यह जानते हुए कि इसकी इच्छा अन्य लोगों की तरह सम्मान पाने की है चाहकर भी उसे नहीं समझा सकता क्योंकि उस व्यक्ति की मानसिक स्थिति, दिमागी हलचल को वह मेधावी वैज्ञानिक भली प्रकार आँक रहा है, समझ रहा है। इसी प्रकार ईश्वर भगवान, देवता (विशेष कर अघोर गुरु) अपने अक्षय भण्डार से ईमानदार, कर्त्तव्यनिष्ठ भक्तों को वह सब कुछ लुटा देना चाहते हैं जो उनका मनोवांछित परन्तु मात्र इच्छा करने वाले उसे अपने अपात्रता की वजह से प्राप्त नहीं कर पाते वैसे ही जैसे कई लोग एक साथ पवित्र गंगाधार में स्नान करे तथा घर जाने के समय केवल पात्रधारी ही गंगाजल ले जायें एवं जो खाली हाथ थे उन्हें खाली हाथ ही जाना पड़े तो इसके जिम्मेदार वे स्वयं ही हैं न कि अनवरत, कल-कल निनाद करती हुई गंगा की अजस्र धारा। अपात्र व्यक्ति ही जल के बिना सूर्य को अर्घ्य नहीं दे सकता तथा फल से सर्वथा वंचित रह जाता है। ठीक वही सिद्धान्त एक चाटुकार अथवा चापलूस के साथ भी लागू होता है। जो कुछ भी वह चाहता है उसके हाथ नहीं लग पाता।

यद्यपि औघड़ के दरबार में किसी व्यक्ति या वस्तु को जटिल क्लिष्ट या ज्यों का त्यों अनगढ़ छोड़ने का कोई विधान नहीं है। यहाँ की भट्टी में तपकर, साँचे में आकार लेकर औघड़ी छेनी हथौड़ी से टकराकर वह व्यक्ति या धातु अपने उत्कृष्टतम स्वरूप में परिवर्तित होने को बाध्य होता है। बशर्ते कि वह औघड़ी शल्य चिकित्सा, नक्काशी या सन्तराश हेतु अपने को स्वतः प्रस्तुत करें तथा औघड़ीय चाकू या नस्तर को पूरी भक्ति भावना, श्रद्धा एवं मनोयोग से अपनाने का सौभाग्य प्राप्त करें तो उनमें आमूलचूल परिवर्तन सुनिश्चित है। जिनका भरोसा शत प्रतिशत अपने शैल्य चिकित्सक पर होता है। वे कतई चाटुकार या चापलूस नहीं होते। ऐसे व्यक्ति यदि ईश्वर या गुरु के समक्ष आते हैं तो वे उनकी मनोदशा से दुःखी होते हैं एवं वास्तव में उस व्यक्ति को सुयोग्य होने की सद्प्रेरणा प्रदान करते हैं। जिससे उसे मनोवांछित प्राप्ति हो एवं जो मात्र चाटुकारी, चापलूसी, कृत्रिमता अथवा बनावटीपन से कत्तई प्राप्त नहीं हो सकता। इसी कारण औघड़ सन्तों द्वारा ऐसी प्रभावी वाणियाँ समाज में प्रेषित कर समाज को उत्प्रेरित किया जाता है जिससे बड़े पैमाने पर आमूलचूल परिवर्तन हो जाय और व्यक्ति अपने ओछे, थोथे, छिछले कृत्यों का परित्याग करें और वास्तव में प्राकृतिक सुगन्धित पुष्प की तरह सौरभ-सुगन्ध फैलाता रहे। जो कागजी फूलों से कभी सम्भव नहीं है। किसी ने कहा भी है कि-

सच्चाई छिप नहीं सकती बनावट के वसूलों से।
कि खुशबू आ नहीं सकती कभी कागज के फूलों से॥

क्योंकि अल्पकाल के उपरान्त ही सत्यता उजागर हो ही जाती है। यह भी तथ्य है कि किसी व्यक्ति विशेष की शक्ल सूरत, चाल-ढाल, व्यवहार उसके मनःस्थिति को प्रतिबिम्बित करते हैं। दूर से ही देखकर चिन्तक, विद्वान अथवा सन्त भाव से युक्त व्यक्तित्व के स्वामियों को पहचाना जा सकता है, उनके प्रभामण्डल के विकरण का अनुभव किया जा सकता है। जबकि किसी चाटुकार या चापलूस की चालढाल, उसके मनःस्थिति का ज्ञान उसके आते ही हो जाता है। क्योंकि उसके वाणी में व्यवहार में सच्चा सहकार, सच्ची भक्ति भावना का नितान्त अभाव होता है। हम सभी ने चर्चित वरुणदेव एवं गरीब लकड़हारे की कथा को सुना है। जिसमें लकड़हारे का स्वांग करके उसका पड़ोसी लोभवश अपने लोहे की कुल्हाड़ी से धो बैठा। पुनश्च दृष्टान्त स्वरूप जैसे कोई व्यक्ति रास्ते में मिले किसी घायल पक्षी की सेवा सुश्रूषा, स्वस्थ करके उसे उड़ा दे एवं इससे उसकी सामाजिक सम्मान में श्रीवृद्धि को देखकर ईर्ष्यावश बराबरी की होड़ में कोई उसका पड़ोसी भी जानबूझकर किसी पक्षी का पैर तोड़कर फिर दिखावटी सेवा सुश्रूषा करने लगे तो वह सम्मान नहीं बल्कि अभिशाप एवं बद्दुआ का भागी होगा क्योंकि वास्तविक फल वास्तविक पेड़ से ही मिलता है।

कभी-कभी कुछेक व्यक्ति अनजाने में, अज्ञानतावश निर्दोषता में चाटुकारिता को ही वास्तविक साधन समझ बैठने की त्रुटि या भूल कर देते हैं। जिसका निराकरण भी प्राकृतिक रूप से ही हो जाता है। एवं उस अहकार को भी टूटते देर नहीं लगती जिसमें खोखली वस्तुओं को वजनदार समझने की भूल की गयी हो। दृष्टान्त स्वरूप एक पूरी तरह लदी हुई बैलगाड़ी को दो बैल बड़े ही आत्मीयता से खींच रहे थे एवं अधिक बोझ के कारण पसीने से तरबतर थे। चौपाइयों के इस कर्त्तव्यनिष्ठा को दूर से ही एक कुत्ता बड़े देर से भाँप रहा था एवं अचानक उसका भी दायित्व भाव उमड़ पड़ा और वह दौड़कर दोनों बैलों के आगे मन्थर गति से उसी चाल में सम्भल कर चलने लगा। चलते-चलते उसे भी यह भान होने लगा कि वास्तव में गाड़ी वही खींच रहा है कुत्ते की

शेष पृष्ठ दो पर

वास्तविक सुख

मनुष्य का विकास ज्यों-ज्यों होता गया है, वैसे वैसे उसकी तीव्र अभिलाषा एक स्थायी सुख, शान्ति एवं समृद्धि की पिपाशा उत्तरोत्तर बढ़ती ही गई है। आज का मानव दिन-रात इसी खोज मरीचिका में उलझा हुआ है, जबकि वह सुख-समृद्धि एवं शान्ति से वास्तव में वंचित हो गया है। भौतिकता, आधुनिक जीवन, आडम्बर, थोथी, तड़क भड़क, अनावश्यक अंग्रेजी के लब्जों का इस्तेमाल करके भोग लिप्सा के भवसागर में गोते खा रहा है। वह परम साध्य को भूलकर साधनों को हथियाते-हथियाते अपने जीवन की इतिश्री कर लेता है। जबकि वास्तविक सुख-शान्ति एवं समृद्धि तो व्यक्ति के व्यक्तित्व से प्रस्फुटित होता है, सारे सुख उसके अन्तर्मन की ही उपज है, वह दिखावट की वस्तु बिल्कुल ही नहीं है न तो वह बाहरी सजावट में है।

सुख तो हमारे आपके विचार करने की उचित शैली का नाम है,काम न करना, बैठे खाना, हृष्ट-पुष्ट होकर गुंडई करना, दबंगई करना, हथियार बंद सुरक्षा में चलना, ऐशो-आराम की दिखावटी जिन्दगी का नाम सुख नहीं है, बल्कि सुख तो संयम में, अनुशासन में, संघर्ष में निहित है, सुख तो श्रेष्ठ सिद्धान्तों को अपनाने का नाम है, अपने कुविचारों, ऋणात्मक सोच, अपने इन्द्रियों की उच्छृंखलता पर विजय का नाम शान्ति है, रात को अच्छी नींद लेने एवं आत्मिक संतोष का नाम समृद्धि हैं। यह सब तभी मिलता है जबकि हमारी दिनचर्या, शास्त्रानुकूल संत वचनानुसार होती है, यह हमें सुनिश्चित ढंग से समझ लेना चाहिए कि जो हमसे भौतिक रूप से समृद्ध दिखते हैं तो यह हम सबके दिमाग की भूल है, कोरी कल्पना है, ईश्वर का विधान बड़ा ही विचित्र है, प्रत्येक मानव को कुछेक ऐसी विलक्षणता प्रकृति द्वारा प्रदान की गई होती है, जिसका जोड़ दूसरा मिलता ही नहीं है, सब छोड़ दें, ईश्वर की कृति मात्र अंगुष्ठ चिन्ह (छाप) को ही लें। सृष्टि में प्रत्येक मनुष्य के दाये या बाँये अंगूठे का चिन्ह एक दूसरे से नितान्त भिन्न होता आया है, जिसे आवर्धक ग्लास से अत्यन्त स्पष्ट अन्तरों को पढ़ा या मार्क किया जा सकता है, कहने का तात्पर्य है कि एक अद्भुत दिव्य सम्पदा प्रत्येक मनुष्य को ऐसी मिली है, जो किसी और के पास नहीं होती, परन्तु परम्परागत रूप से हमें तलाश उन्हीं वस्तुओं की होती है, जिसका हमें अभाव खलता है, जो हम दूसरों से प्राप्त भी नहीं कर सकते, क्योंकि हम स्वयं अपनी सम्पदा में उन्हें हिस्सेदार नहीं बना सकते। अस्तु सुख प्रत्येक व्यक्ति के सोचने के स्तर का नाम है, दृष्टिकोण का नाम है। एक मनीषी ने कहा भी है कि **''गोधन गज धन, बाजधान और रतन धन खान, पर जो पावे संतोष धन सब धन धुरि समान''** और संतोष तो अपनी आत्मा की उपज है। माँ सर्वेश्वरी की महती कृपा का नाम है।

परम पूज्य औघड़ बाबा कीनाराम अरबों के स्वामी नहीं थे, वर्तमान काल के अघोर संत साधकों की भी अवस्था ज्यों की त्यो हैं। उन्हें अपने रहने, खाने, पहनने की सुधि बिल्कुल नहीं होती। आज यहाँ, कल वहाँ निरन्तर प्रवास में उनके लिये झोपड़ी या महल कोई विशेष अर्थ नहीं रखता बल्कि वे तो मिट्टी के बर्तन में आपके द्वारा प्रदत्त हलवा-पूडी या सूखी रोटी को सप्रेम पान कर लेंगे, अपेक्षाकृत स्वर्ण पात्रों में विभिन्न व्यंजनों से सजी हुई उन थालियों के जिनमें काली कमाई या दूसरों के हिस्से को काट-छपट कर तैयार किया गया हो। यद्यपि सभी स्तर के लोगों की उनके स्तर पर नाना प्रकार की समस्यायें भी होती है। उनके समाधान हेतु वास्तविक सुख और शान्ति हेतु, संतुष्टि हेतु जीवन के जरा-व्याधियों की मुक्ति हेतु वे संतों के पास खींचे चले आते हैं और खुशहाली पाने के लिये चरणों के दरश-परस की अभिलाषा लिये हुए उपस्थित होते रहते है, जहाँ संतों के द्वारा जीवन का मूल-मंत्र हमारे आपके ही व्यवहार में परिवर्तन, परिवर्द्धन लाकर, हम सबको दुर्गुणों से रहित कर, परिष्कार कर सच्चे, सुख, शान्ति और समृद्धि की राह बता दी जाती है, एक सुगम मार्ग का पथिक बना दिया जाता है, हमारे सोचने की पद्धति में आमूल-चूल बदलाव कर हमें भौतिकता की अंधी दौड़ से, ईर्ष्या से, आत्म श्लाघा से, अहंकार से, वासना के दलदल से स्थायी रूप से हटाकर एक ऐसे मार्ग की ओर अग्रसर कर दिया जाता है, जहाँ पर सुख, समृद्धि एवं शान्ति की अनवरत वर्षा होती रहती है। प्रत्येक व्यक्ति ईश्वर द्वारा प्रदत्त दैहिक, दैविक सुखों में ही परमानन्द की प्राप्ति करता है, उसे फिर भौतिकता की कमी नहीं सताती न तो दूसरों की चुपड़ी को देख उसका जी ही ललचाता है, वह तो अपनी रूखी-सुखी रोटी में ही एक अद्भुत सुख-संतुष्टि एवं समृद्धि पाकर जीवन में सुख चैन की वंशी बजाता रहता है।

C-अघोराचार्य बाबा कीनाराम अघोर शोध एवं सेवा संस्थान् के लिये प्रकाशक एवं मुद्रक **अरुण कुमार सिंह** द्वारा महादेव प्रेस, बी.3/335, रविन्द्रपुरी कॉलोनी, भेलूपुर, वाराणसी (उ0प्र0) से मुद्रित एवं प्रकाशित।

सम्पादक : चन्द्र नाथ ओझा

ग्राफिक्स : आशीष कुमार बरनवाल

☎ **0542-2277155.**
e-mail–neenad@aghorpeeth.org
www.aghorpeeth.org

प्रथम पृष्ठ का शेष

भगवान के यहाँ चापलूसी नहीं चलती

स्थिति को देखकर गाड़ीवान ने भी भाँप लिया एवं ज्योंही एक चाबुक कुत्ते को लगी वह स्वांग ध्वनि निकालते हुए गाड़ी से अलग-थलग छिटक कर दूर हो गया तथा उसे अपने व्यर्थ के अभिमान का आभास हुआ।

नैसर्गिक माता-पिता के प्रति जैसे उनके सन्तानों का व्यवहार, बनावटी, दिखावटी या प्रदर्शन योग्य नहीं होता बल्कि वह आद्योपान्त पूरी तरह से प्राकृतिक लगाव से लवरेज रहता है।

उसी प्रकार यदि ईश्वर भगवान या गुरु के प्रति भी सांसारिक व्यक्तियों का यथानुकूल आचरण हो तो कोई कारण नहीं कि अभीष्ट की सिद्धि न प्राप्त हो। गुरु या भगवान के समक्ष कर्त्तव्यपरायणों एवं चाटुकारों की टोली को असली तथा नकली नामों से भी पुकारा जा सकता है क्योंकि चाटुकारिता, चापलूसी में सत्यता की शक्ति नहीं होती बल्कि वह छिछली एवं मौका आते ही अपने स्वरूप को प्राप्त हो जाती है। दृष्टान्त स्वरूप किसी कुशाग्र विद्यार्थी की नकल करते हुए किसी अन्य विद्यार्थी द्वारा मात्र घंटों पुस्तक को समक्ष रखकर अध्ययन का स्वांग किया जाय तो फल की प्राप्ति कत्तई नहीं हो सकती।

कोई कारण नहीं कि यदि जन समुदाय अपने लगन, परिश्रम एवं अध्यवसाय से कृत संकल्प हो ईमानदारी से अपनी भावना का इजहार करें परस्पर सौहार्द का वातावरण सृजित करें, जीवन में उन आवश्यक तथ्यों का समावेश करें जिससे प्रत्येक मनुष्य को कर्त्तव्यानुसार उसकी हिस्सेदारी मिले एवं जीवन में सादगी, सरलता, निर्मलता को सहजता से स्वीकार करे अपनावे तो उससे वह सब कुछ प्राप्त हो जाता है जो छल, छद्म, चाटुकारिता अथवा चापलूसी के में पर्याप्त समय दिये जाने के पश्चात् भी चालाक, लोभी अथवा बाजीगर प्रकृति के व्यक्तियों को प्राप्त नहीं हो पाता।

औघड़ी वाणियाँ बड़े ही सरल तरीके से प्रभावोत्पादक असर डालती है एवं एक क्षण हमें अपने कर्त्तव्य की ओर झाँक लेने की, उसकी विवेचना कर लेने की, अपने अन्तर्मन से आत्मनिरीक्षण हेतु संकेत करती है। इस प्रकार प्रतिपल व्यक्ति के मानस परिष्कार हेतु सावधान करती रहती हैं। गुरुद्वारा, मंदिर अथवा पावन पवित्र स्थान में हम क्यों आते हैं? क्या प्रयोजन है? क्या लाभ है? इसका बड़ा ही सटीक उत्तर है कि जीवन के उतार चढ़ाव, असावधानी, आपाधापी में हम अपने सन्मार्ग से कहीं कहीं विचलित न हो, हम अपने लक्ष्य को पाने की लालसा में सदैव अनुशासित रूप से गमन करते रहें, जीवन की गाड़ी सुरक्षित रहे एवं अन्ततः हमें प्रसन्नता, सुख, शान्ति की प्राप्ति सपरिवार हो सके। प्रायः यही अभीष्ट गृहस्थ जीवन के साधकों का होता है, इसीलिये हम किसी देवी, देवता अथवा गुरु के समक्ष नतमस्तक होते हैं, मन ही मन या सस्वर अपनी मन की इच्छा, व्यथा को व्यक्त करते समय अपने समस्त शारीरिक गतिविधियों से मुद्राओं से, नमस्कार एवं साष्टांग से यह प्रकट करते हैं कि मैं आपके समक्ष अपने आपको पूर्णतया समर्पित करता हूँ, आपके प्रति मेरा विश्वास अक्षय है, अटल है, अडिग है, अविचलित है, निर्विवाद है और यह भावना मन, कर्म, वचन से परिलक्षित भी होनी चाहिए, जैसा कि हम आप अनुशासित सैनिकों के परेड को देखकर अनुमान लगा लेते हैं कि अमुक टुकड़ी अपने कर्त्तव्य के प्रति पूर्ण निष्ठावान है, इसमें कर्त्तव्य बोध है तथा पूर्ण प्रशिक्षण प्राप्त कर पारंगत है। परन्तु यदि किसी सैनिक के मन, कर्म, वचन में सामंजस्य नहीं है, वह कर कुछ रहा होता है, मस्तिष्क कहीं और है तो वह अन्य सैनिकों के कदमताल में ठीक नहीं बैठता और उसे उस्ताद या अधिकारी परेड से या सेवा से पृथक कर देते है। कहने का तात्पर्य यह है कि पूरे मन से उसका प्रयास अपने अभीष्ट इष्ट के प्रति नहीं था चाहे वह शस्त्र चलाने में निपुण ही क्यों न हो, उसे अन्ततः हथियार से भी वंचित ही होना पड़ता है। इसी प्रकार यदि कोई व्यक्ति केवल वाणी से ही अभिव्यक्ति करें, परन्तु वह वाणी मात्र उसके जिह्वा से ही निकली हो न कि हृदय से तथा वह समक्ष खड़े या बैठे देवी-देवता, विग्रह या गुरु के प्रति बड़े ही सजगता से उनके स्वयं को क्षणिक रिझाने व गुणगान करने में ही लगा हो एवं इसी औपचारिक व्यवहार के सहारे उस दिव्य फल की आशा

शेष पृष्ठ तीन पर

महानिर्वाण-दिवस

हर वर्ष की भाँति इस वर्ष भी क्रींकुण्ड स्थल, वाराणसी में अघोरेश्वर महाप्रभु अवधूत भगवान रामजी का महानिर्वाण दिवस दिनांक 29.11.2014 दिन शनिवार को प्रातः श्रमदान, प्रार्थना-कीर्तन एवं सफल योनि के पाठ के साथ ही बड़ी श्रद्धा-भक्ति से मनाया गया एवं अघोरेश्वर के वचनों के सद्यः पालन का संकल्प लिया गया।

इस अवसर पर स्थल में उपस्थित स्वयंसेवकों द्वारा क्षौर-कर्म कराया गया एवं श्रीगुरुचरण में श्रद्धा अर्पित करते हुए श्रद्धांजलि अर्पित की गई।

भगवान के यहाँ चापलूसी नहीं चलती

द्वितीय पृष्ठ का शेष

करें तो यही चाटुकारिता या चापलूसी की श्रेणी में आती है। चाटुकारिता या लोभ-लालचवश की गयी लालसा की पहचान शीघ्र ही हो जाती है, उसमें असीम श्रद्धा, अगाध विश्वास का अभाव होता है, वह ऊपरी तौर पर होती है, इससे देवी-देवता या गुरु चाहकर भी वह सब कुछ प्रदान नहीं कर पाते जिनकी वह आशा करता रहता है क्योंकि चापलूसी या चाटुकारिता छिछले मनुष्यों के अहं भाव की पुष्टि करता है, हमारे समाज में आज ऐसे बहुतेरे बहुसंख्यक जन हैं जो आत्मश्लाघा अथवा आत्म प्रशंसा के भूखे है, जो उनका दरबारी है, भाँट है, उनके हर गलत सही गतिविधि को सदैव सही ठहराता है वह अवश्य ही उनसे कुछ पारितोषिक पा जाता है, जबकि एक खरा, निरपेक्ष व्यक्ति, सही को सही बताने वाला ऐसे प्रभावी व्यक्तियों का कृपापात्र नहीं हो पाता, परन्तु यह शैली ईश्वर-देवता या गुरु के समक्ष बिल्कुल ही नहीं चलती और ऐसे व्यक्ति परिवार में, समाज में तिरस्कृत होते हैं, ओछे सिद्ध हो जाते है। कहने का तात्पर्य है कि मात्र दिखावा, प्रपंच, पाखण्ड या भक्ति का आडम्बर कर लेने से हमें वांछित "पूर्ण मनोरथ" की प्राप्ति कतई नहीं हो सकती बल्कि उसके लिये अपनी पूरी शक्ति, सामर्थ्य, भावना से ओतप्रोत होकर जब शरणागति अथवा पूर्ण समर्थन का सौभाग्य हमें अन्तर्आत्मा से प्राप्त होता है तो वह सब संभव है जिसकी वास्तव में हमें आवश्यकता है, जरूरत है, समय की माँग है एवं जो न केवल हमारे व्यक्तित्व के परिष्कार के लिये अपरिहार्य है बल्कि इससे हमारी आने वाली पीढ़ियाँ, संतति भी विरासत में, संतृप्त होकर उसका रसास्वादन कर लेने का अप्रीतम सुख पाती है।

अस्तु वास्तविक भक्ति या भावना हृदय से प्रतिध्वनित, प्रतिबिम्बित होती है एवं वह असरकारी होती है जिसमें देवी या देवता के समक्ष महज दिखावे के लिए घुटने टेकना और अपने को चालाक मानना हमारी निपट अदूरदर्शिता एवं बेवकूफी ही है, क्योंकि यदि हमारी आत्मा यह स्वीकार नहीं कर रही है कि जिसके समक्ष हम नतमस्तक हैं, वे हमारी अन्दरूनी स्थिति से पूर्णरूपेण अवगत है, उन्हें त्रिकाल का ज्ञान है, उनका दृष्टिपात या सामना ही सी.सी. स्कैन की भाँति हमारी मानसिक स्थिति, मनोदशा को भाँप लेगी तो हमारी स्थिति कचहरी में उसी महज दाना बेचने वाले की है जिसे कानूनी ज्ञान से कुछ लेना देना नहीं है, लेकिन अपने को अरले दरजा का विधिवेत्ता समझें कि वह जज महोदय को पहचानता है एवं उनकी क्षमता, प्रभाव एवं अधिकार से पूर्ण परिचित है तथा उन्हें अपने करतबों से प्रभावित कर किसी गम्भीर मामले में फैसला बिना उचित बहस, योग्यता या तर्क के बिना सम्यक् प्रस्तुति के वह अपने पक्ष में निर्णय करा लेगा। स्थिति अजीबोगरीब तब हो जाती है, जबकि जज महोदय यह ताड़ते रहते हैं, उसकी मनोदशा को भाँपते रहते हैं तथा मन ही मन उसकी बेबसी, अकाट्य प्रयत्न पर अफसोस भी करते है, ठीक उसी प्रकार हमारी स्थिति देवी देवता अथवा गुरु के समक्ष तब हो जाती है यदि हम अपने पूरे अन्तर्मन से प्रार्थना एवं सार्थक दिशा में सद्प्रयत्न नहीं करते। व्यक्ति की कर्त्तव्य निष्ठा, उसकी तपश्चर्या, उसकी प्राकृतिक सद्भाव जुड़ाव उसके अन्तर्मन से उत्पन्न होता है, उसमें शबरी की भावना पिरोयी रहती है। उदाहरणस्वरूप जब एक पढ़ी लिखी महिला या पत्नी जिसे अपने पति से, बहन जिसे अपने भाई से, पुत्री का अपने माता-पिता से अथाह नैसर्गिक स्नेह जुड़ाव रहता है उसे कुछ भी कृत्रिम बनावटी नहीं करना पड़ता, स्वमेव उसके व्यवहार में उसका पति प्रेम, भ्रातृप्रेम, मातृ-पितृ प्रेम प्राकृतिक रूप से प्रतिध्वनित होता रहता है, साथ ही उसके अपने सगे-सम्बन्धी भी अपनेपन से उससे जुड़े होते हैं, ठीक यही व्यवहार अपने आराध्य, अपने देवता के प्रति भी भक्तों का, श्रद्धालुओं का, व्यक्तियों का होना चाहिए, न कि आडम्बरपूर्ण भावना छलावा या दिखावा। सच्चा प्रेम सच्ची सद्भावना होनी चाहिए, जिसको अपनी पूँजी बनाकर इष्ट के समक्ष प्रस्तुत करना पड़ेगा न कि महज दिखावट या ढोंग।

दर्द होने पर, आपके बीमार पड़ने पर, हर दुःख, बाधा-विपदा में बिना रूके, बिना विलम्ब किये जैसे आपकी जननी व्यवहार करती हैं। उसी तरह आपके आराध्य, आपके गुरु, आपके देवी-देवता का आश्रय, सहारा मिलना सुनिश्चित है, यह अटल सत्य है, क्योंकि यह सब नैसर्गिक जुड़ाव है, दृष्टान्त स्वरूप कई सन्तानों के माता-पिता का ध्यान अपने थोड़े कमजोर या अस्वस्थ पुत्र या पुत्री पर अधिक ही होता है क्योंकि उसे सम्हालना, सहारा देना, सबल बनाना उसके देवी-देवता, आराध्य का कर्त्तव्य बन जाता है, कहा जाता है कि भक्तों के वश में भगवान्! बशर्ते कि भक्ति, भक्ति हो, श्रद्धा, श्रद्धा हो विश्वास, विश्वास हो, न कि उसमें स्वार्थ हो, तिजारत हो, लोलुपता या महज कुछ देकर कुछ खरीदने जैसी भावना हो।

व्यक्ति या मानव उस परमपिता, गुरु या आराध्य से ठीक वैसे ही जुड़ा है, जैसे सागर में नन्हीं-नन्हीं मछलियाँ। वे सारे जीव, जन्तु सागर में जन्म से लेकर मृत्यु पर्यन्त वहाँ से ही पोषण, भोजन पाते रहे हैं, वह जीव-जन्तु सागर को क्या देगा, यह तथ्य अघोरी गुरु या औघड़ संतों के साथ शत-प्रतिशत लागू होता है, जो आपके पूरे जीवन का सृजनहार है, रात दिन आपकी पूजा कर, उसने आपको सक्षम बनाया है, आपको चैतन्यता दी है तथा सबसे विशेष तथ्य यह है कि हमको, आपको मनुष्य बनाया है तथा निरन्तर मानव बनने, साहसिकता, बहादुरी, उत्तम कर्त्तव्य, उच्च चरित्रवान बनाकर निखारने में आपको सँवारने में बड़े प्राकृतिक रूप में अहर्निश व्यस्त है। आपको पता भी नहीं चलता वह आपके हृदय के धड़कन की निरन्तरता को बनाये रखता है, आपको उतनी ही गर्मी, सर्दी में प्रशिक्षित करता रहता है जिससे आपका शारीरिक एवं मानसिक विकास होता रहे आपका क्षय न हो, आप अपने देवी-देवता गुरु, माँ सर्वेश्वरी के ध्वज को लेकर, उसके साये में अपरिमित विकास को प्राप्त हों, फिर आप मस्त होकर दुनियाँ में निस्पृह कोमल होकर निर्द्वन्द, निर्भय सिंह की भाँति विचरण करते रहे, शेष भार माँ गुरु का है, उनके कर्त्तव्य पालन में जरा भी संदेह नहीं है।

अतः हम आम जनों को अपने मन, कर्म, वचन एवं तन, मन, धन से अपने माने हुए देवी-देवता गुरु, आराध्य की आराधना आर्त भाव से बिना बनावट के स्वाधिकार करना चाहिए न कि चाटुकारिता या चापलूसी के दम्भ के रूप में। हमारे अपने सार्थक प्रयत्न ऐसे हो कि शायर के उन पंक्तियों को का भाव साकार हो जिसमें कहा गया है कि-

"खुदी को कर बुलन्द इतना कि हर तहरीर से पहले खुदा बन्दे से खुद पूछे बता तेरी रजा क्या है?" एवं तदनुसार ही अभीष्ट आशीष की बरसा इष्टदेव, गुरु या भगवान को करनी पड़े। गोस्वामी तुलसीदास ने भी परीक्षण हेतु कहा है कि-

धीरज धरम, मित्र अरू नारी।
आपद काल परिखिहौ चारी।।

यानि असली-नकली या चाटुकारों की पहचान ऐसे ही कसौटी आने पर अपने आप प्रकृति द्वारा कर ली जाती है।

दृष्टान्त स्वरूप लोकप्रिय हनुमान चालीसा या किसी भी देवी देवता या गुरु की चालीसा जिसमें उनके गुणों का बखान किया जाता है। वह कोरी चापलूसी नहीं है बल्कि उससे हमें ऊर्जा शक्ति, सामर्थ्य एवं साहस की प्राप्ति होती है। सांसारिक बाधाओं का समन बड़े ही आसानी से करने की हममें क्षमता विकसित हो जाती है। एक पवित्र भाव का उदय होता है क्योंकि गुरु या देवताओं द्वारा एक कठिन प्रशिक्षण, संघर्ष के पश्चात् ही उपलब्धि पाये जाने की स्थिति का वर्णन होता है।

तुलसीदास जी द्वारा मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीरामजी के महज गुणों का बखान सतही तौर पर नहीं किया गया है बल्कि कर्त्तव्य के साँचे में ढलकर पग-पग पर धैर्य, सहिष्णुता एवं विनम्रता के साथ ही दानव दलन को दर्शाया गया है। जिसे यदि अक्षरशः हृदय में धारण किया जाय तो बड़े सरलता से हम दुरूह से दुरूह बाधाओं का, विपदाओं का निराकरण अति सरलता से कर लेते हैं।

माँ गुरु से यही प्रार्थना है कि वे हममें ऐसी भावना का समावेश करें जैसा कि परम पूज्य बड़े सरकार की वाणी जो क्रींकुण्ड के सिंह द्वार पर भी अंकित है कि- "हे ईश्वर हमारे सहयोगियों को सद्बुद्धि दें।"

अतः चाटुकारिता या चापलूसी के स्थान पर हमें अन्तर्भावना से हमारी अन्तर्भावना की पुकार श्रद्धा से भींगी आँखें प्रभु की ओर निहारते रहे तो कोई कारण नहीं आराध्य देव भी आनन-फानन में दौड़कर हमारी सहायता को उद्यत न हो। ***हर हर महादेव***

शोक-सन्देश

बड़े दुःख के साथ सूचित करना पड़ रहा है कि पीठाधीश्वर जी के परम शिष्य, कृपापात्र, प्रमुख संगीतकार, नगर निगम, वाराणसी में कार्यरत सुनील सिंह जी का आकस्मिक देहावसान दिनांक 09.12.2014 दिन मंगलवार के एक सड़क दुर्घटना में हो गया।

दिवंगत आत्मा की शान्ति हेतु दिनांक 10.12.2014 को अघोर विधिनुसार पूजा-पाठ (सफल योनि का पाठ) एवं प्रार्थना के पश्चात् उनकी शव यात्रा क्रींकुण्ड स्थल, वाराणसी से शुरू हुई, जिसमें स्थल के स्वयंसेवकों के साथ ही शहर के सैकड़ों बुद्धिजीवियों, गणमान्य व्यक्तियों प्रमुख संगीतकारों ने महाश्मशान तक प्रतिभाग किया एवं भावभीनी श्रद्धांजलि के साथ श्रद्धा सुमन अर्पित किया।

शिवलोकवासी सुनील सिंह जी क्रींकुण्ड स्थल, वाराणसी के प्रत्येक कार्यक्रमों में प्रतिभाग करते थे एवं अपनी संगीत सेवा से श्रद्धालुओं में लोकप्रिय थे। आपके द्वारा कई कैसेट, सी.डी., डी.वी.डी. के माध्यम से अघोर भजन एवं गीतों को लोकप्रिय बनाया गया। मृदुभाषी सुनील जी ग्राम नियामताबाद, जिला-चंदौली के निवासी थे। अघोरेश्वर शोक संतप्त परिवार को संबल प्रदान करें।

मनुष्य कब बनोगे?

अघोरेश्वर महाप्रभु बाबा भगवान रामजी का आशीर्वचन

पिछले अंक का शेष

धर्म बन्धुओं!

जो अच्छे ऋषि, महर्षि, सज्जन हुए हैं, उनके मापदण्डों से तौलना चाहिये, उनके मापदण्डों में अपने को रखना चाहिये। तभी हमारा हर तरह से कल्याण भी हो सकता है। बहुत से लोग विश्वास करते हैं और बहुत लोगों को कहते हुए सुनते भी हैं कि ईश्वर का दर्शन हो जाय तो सभी पाप कट जायेंगे। आपने कहा कि मुझे तो बिल्कुल विश्वासनहीं हैं। न्यायमूर्ति रोज अपने बगले से न्यायालय जाते है और अपराधी रोज ही उनका दर्शन करते हैं और अपराध भी करते रहते है तो क्या वह क्षमा हो जायेगा? वह तो तभी होगा जब न्यायाधीश के मन में यह बात जँच जाय वह जनता के मुख से सुन ले कि अब वह गलत कार्यों से विमुक्त है तो जो वह किया है, उतने ही का सजा देकर क्षमा कर देगा। जब तक हमसे अपराध बनता रहेगा तब तक उसका कोई महत्व नहीं है चाहे भगवान का ही दर्शन हो। अपराध आपका मन दूषित करता है, आपकी आत्मा पद्लित होती हैं, आप घबड़ा जाते हैं, ग्लानि करते हैं, खुद भी दु:खी होते हैं। यह सब काम हमसे न बन पाये तो मुझे विश्वास है कि भगवान, भगवती आपके घर, आपके आश्रम आयेंगे, आपके मार्ग, आपके रास्ते में ही आपसे मिलेंगे, विचार करेंगे, परामर्श करेंगे। देवता कोई दूसरे तरह का नहीं होता। हमी आप में वह देवता है। हमी आप में वह भगवान है। हमी आपकी वाणियों उसकी वाणी सुनायी देती है। इसी दृष्टि से उसे देख सकते हैं और उसकी अनुभूति भी हो सकेगी। यह सब होगा? जब अपने पास दो मिनट ठहरते हो।

हम जिसे धर्म समझते हैं, हमारे करने का ढंग जैसा परम्परागत चला आरहा है, वैसा ही नहीं बहुत सी बातें कहने सुनने समझने की होती हैं, उसका व्यवहार पक्ष कुछ और ही होता है। यदि व्यवहार पक्ष को ठीक ढंग से जानेंगे तो जितने भी धर्मग्रन्थ हो चाहे जिस किसी धर्म या महापुरुष का हो, सबके प्रति हमारे मन में आदर, प्यार होगा। आप ऐसा न समझें कि हिन्दू धर्म में ही सब कुछ रहता है और इसी में भगवान रहते हैं। हमारे महापुरुष ध्रुव जिसे हम सत्य कहते हैं वह एक शौर्यमण्डल बना लिये मानवीय गुणों के कारण ही उनका सौर्यमण्डल बना। इस प्रकार हम देखते हैं बुद्ध और ईसा को। उनके अनुयायी आपसे कम प्रेरणा नहीं प्राप्त करते।

जो अनुयायी हैं वे अनुकरण करके प्रेरणा प्राप्त कर सकते हैं। मगर हमें कितना अनुकरण करना है कि कितना अनुकरण नहीं करना है, बराबर ध्यान देना होता हैं यदि ध्यान नहीं देंगे, नहीं समझ पायेंगे तो हमारा सब कुछ व्यर्थ है। देखिये कितनी, मातायें, बन्धु फल, फूल, नैवेद्य लेकर स्नेह के साथ पूजा करने आज आ रहे थे। मैं तो समझ रहा था, यह भावना जब उत्पन्न हुई, उसी समय पूजा हो गयी और यह उपचार मात्र रहा। मगर उस उपचार में एक दूसरे का आदर करना चाहिये। शायद उसी में हमारे इष्ट देवता, देवी, ऋषि मुनि हो। इन्हीं में वह सब गुण भरा हो जिसके लिये हम भागे चलते हैं।

इसीलिये हमारे साधुओं में कहा जाता है कि भाई अकेले बैठो। अकेले करोगे तो क्या लाभ होगा? जब मन में आयेगा तब पेशाब पाखाना करेंगे, जब मन में आयेगा टाँग पसार कर बैठेंगे। अकेले रहने में तत्काल यहीं सुख है। जहाँ एक साथ बहुत लोग है, जरा भी अकेले साथ रहने का सम्भावना नहीं तो अभ्यन्तर से अकेले होंगे। मगर अभ्यन्तर से भी अकेले नहीं थे। अभ्यन्तर से भी बेचैनी थी। अभ्यन्तर बाह्य दोनों से बेचैनी हो तो वह व्यक्ति कैसे बैठ कर इस बात को समझ सकता है। हमें किसी से कुछ लेना है, जानना है तो सतर्क होंगे। तभी उनके चेहरे पर उनकी दृष्टि समझ सकेंगे कि उसमें क्या आभा है, क्या मनोकामना है। आपने कहा कि गाँवों में जाड़े में लोग कउड़ा जलाकर आग तापते हैं तो वह गाँव भर का प्रपंच का अखाड़ा बन जाता है। एक तो वह बाह्य अग्नि है, अभ्यन्तर की भी अग्नि है, हमारे कलुषित विचार, कलुषित भावनायें जिसमें हम सुलग रहे हैं, लहर रहे हैं उसका तेज चारों तरफ फैलाता है और लोग समझते हैं कि कैसा बेचैन हैं।

इन सब चीजों से धीरे-धीरे विरक्त होकर, हमारा चित्त उपराम होगा तो हम एक दूसरे को तन, मन, वचन और अर्थ से भी मदद करेंगे। यदि ऐसा होगा तो सम्मान दोगे तो सम्मान पाओगे। आदर दोगे, आदर पाओंगे। हम किसी को अन्न जल देते है तो उसको अन्न और पानी नहीं देते उसको स्वास्थ्य देते है, उसको बल देते है, उसको वीर्य देते हैं। किसी को वस्त्र देते हैं तो उसको वस्त्र नहीं देते उसकी लज्जा को, उसके भाव को रखते हैं। इसी तरह किसी को दोष देते हैं तो उसी तरह तत्काल आपको मिलता है, बाद में भी मिलता है और उससे भी ज्यादा मिल जाता है।

भगवान ईश्वर जो नहीं दीखता है उनका कारण यही है कि आप अपने आप में नहीं है बिल्कुल अपने पास नहीं है। वह आपकी स्थिति से बहुत दूर है। बहुत लोग यहीं रहते हैं जो हम से लाखों मिल दूर हैं। बहुत लोग यहाँ से सैकड़ों मील दूर हैं, उनके लिये हम पाँच कदम पर हैं। जहाँ स्नेह प्यार है, एक दूसरे के प्रति अनुराग है,वह बहुत नजदीक डाल देता है, नहीं मिलते है तो भी वार्ता हो जाती है, संसर्ग भी हो जाता है। यह प्रत्यक्ष टेलीविजन पर देखा जाता है। आप अपने मित्र, गुरुजन या महात्मा जिनके लिये स्थिर चित्त होकर, सतर्क, सचेत होकर कहते हैं तो सटीक वह वहाँ पहुँचता है।

पूज्य बाबा ने कहा कि आप ही का विचार जो हमारे पास था आप के समक्ष रखा। यदि यह आपको रुचिकर होगा, आप यहाँ होंगे तब तो समझे होंगे। यदि यह आपके योग्य हो, आपके व्यवहार में आवें तो अवश्य करेंगे। आपने बड़े भाग मानुष्य तन पावा की स्मृति दिलाते हुए पुन: कहा कि हमसे कोई ऐसा अपराध न बन सके जिससे समाज में प्रतिष्ठा, सम्मान न पा सके। हम दु:ख, क्लेश से भले मर जाय, दूसरे अच्छे कुल में अच्छे देश में जन्म होगा पर अपराध करके दूसरे को मार के कोई सोचे कि जीता रहेगा तो वह बिल्कुल नहीं जीता। वह मरता रहता है, अपना लाश ढोता रहता है। मन से बिल्कुल बेचैन है। न घर अच्छा लगता है न बाहर।

अपनी लाश-लबादा अपने ही न ढोना पड़े, दूसरे को भी न ढोना पड़े। जीना सुगम ही हल्का हो। हमें भी सुख मिले, दूसरों को भी मिले आपने आभार प्रकट करते हुए कहा कि आप लोगों ने स्नेह, प्यार, उत्साह भरी भक्ति जो आज हमें दिया है, उसके लिये मैं बड़ा आभारी हूँ, कृतज्ञ हूँ और इसके बदले में कुछ नहीं दे पा रहा हूँ देनाभी चाहूँ तो शायद आपको मिले या नहीं क्योंकि आपके साथ बहुत से आपके सड़े गले विचार लगे हैं। मन में बहुत सी कलुषित भावनायें होती हैं जिनके चलते आप उसे अपना सकेगे या नहीं, वह आपके यहाँ ठीक से रह सकेगा कि नहीं मैं इनमें बहुत कम सम्भावना करता हूँ। आपने आशा प्रकट करते हुए कहा कि आप लोगों ने बहुत धैर्य और शान्ति के साथ हम लोगों की बातचीत में भाग लिया, सुना और समझा। जिन कठिनाईयों के चलते आप उन मनोवृत्तियों को अपना लेते हैं, उन कठिनाईयों का थोड़ा थोड़ा त्याग करें और जैसे सबेरे से ही फल, फूल, धूप, नैवेद्य देते रहे हैं, उनके साथ और भी कुछ दे सके तो मुझे भी बहुत खुशी होगी। आपमें किसी तरह की कमजोरी हो जिसके चलते आप घर परिवार और कुटुम्ब में अपमानित होते हो उसका सब नहीं तो थोड़ा-थोड़ा भाग भी परित्याग कर देते है, दे देते है तो उससे आप आदर पायेंगे, उससे आपके जीवन में बड़ा विश्राम, शान्ति मिलेगी।

अघोर सूत्र

- अध्यात्म पूर्ण सत्य है और दर्शन अधूरा सत्य है।
- मन बुद्धि थक जाते हैं। शाश्वत सत्य के उदय होते ही वह मनुष्य प्राणी के लिए ग्रह शीय सम्पदा है।
- विपत्ति में घबड़ाना नहीं चाहिए। आपत्ति में धैर्य नहीं छोड़ना चाहिए। जहाँ से बुद्धि अपनी थक जाती है, वहाँ उसी के बाद ईश्वर पाना सुगम हो जाता है।
- आपको अपने ऊपर विश्वास करना है और आपका यही विश्वास सबसे बड़ा सत्संग है।

अघोरेश्वर महाप्रभु बाबा भगवान रामजी